जनसत्ता रविवारी

● 17 मई, 2015 ●

इस कोलाहल में

इन दिनों धर्म और राष्ट्रवाद को इस तरह गड्डमड्ड कर दिया गया है कि सामाजिक समरसता के लिए खतरे बढ़ते गए हैं। हालांकि राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान ही हिंदुत्व के नाम पर संगठन खड़े कर लिए गए थे, पर अब उनकी जड़ें पनप चुकी हैं और उन्हें सत्ता में बैठे लोगों की सरपरस्ती भी हासिल है। इसके चलते समाज, परंपरा, संस्कृति और विकास में भागीदारी आदि के सदियों के समावेशी ताने-बाने में कैसी टूट-फूट हो रही है, बता रहे हैं आनंद पटवर्धन।

गांधी का हत्यारा नाथूराम गोडसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) का सदस्य था और अपने गुरु विनायक दामोदर सावरकर की तरह 'हिंदू महासभा' से भी जुड़ा था। नाथूराम का छोटा भाई, गोपाल गोडसे, गांधी हत्या के षड्यंत्र में शामिल था। उसने जेल से बाहर आने के बाद एक इंटरव्यू में इस बात को स्वीकार किया था कि दोनों भाइयों ने कभी आरएसएस छोड़ा नहीं था, मगर आरएसएस और सावरकर को बचाने के लिए अदालत में झूठ जरूर बोला था। अंगरेजों ने अपना कारोबार चलाने के लिए एक शिक्षित भारतीय मध्यवर्ग तैयार किया। मगर नतीजा कुछ उल्टा हुआ। 1885 में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना हुई, जिसमें मुख्य तौर पर व्यवसायी, उद्योगपति और वकील शामिल थे। गांधी के

विनायक दामोदर सावरकर

आगमन के बाद स्वतंत्रता आंदोलन में बड़े पैमाने पर मजदूर और किसान भी शामिल हुए। राजा-महाराजा और जमींदार वर्ग को इस जम्हूरियत का खतरा जल्द महसूस हुआ। कांग्रेस गठन के तीन साल के भीतर ही, अगस्त 1888 में, अलीगढ़ के सर सैयद और काशी के राजा शिवप्रसाद ने अंगरेजों के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करने के लिए यूनाइटेड इंडिया पैट्रियॉटिक एसोसिएशन (1888) का गठन किया। बाद में इसी पैट्रियॉटिक एसोसिएशन का विस्तार मुसलिम लीग (1906), हिंदू महासभा (1915) और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (1925) जैसे धार्मिक संगठनों की शक्ल में हुआ। इनमें उच्च जाति के ब्राह्मणों द्वारा नागपुर में गठित 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' ने अब तक सबसे गहरे निशान छोड़े हैं।

'धर्म' और 'राष्ट्रवाद' के नाम पर सांप्रदायिक संगठन बने और मजबूत हुए, पर इनका लक्ष्य भारत को आजाद कराना नहीं था। तथ्य यह सच सामने रखते हैं कि ब्रिटिश शासन के खिलाफ किसी सांप्रदायिक संगठन ने कोई लड़ाई नहीं लड़ी और सावरकर के अलावा, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिंदू महासभा का कोई भी सदस्य जेल नहीं गया।

1910 में जब सावरकर की गिरफ्तारी हुई, तब तो वे भी सांप्रदायिक नहीं थे। इस बात की पुष्टि सावरकर की 1909 में प्रकाशित किताब 'इंडियन वार ऑफ इंडिपेंडेंस 1857' से होती है। इसमें सावरकर ने अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने वाले हिंदू और मुसलमान दोनों समुदायों की खुल कर प्रशंसा की थी। अंडमान कैद के दौरान सावरकर हिंदू राष्ट्रवाद के विचारक बने और इसे 'हिंदुत्व' का नाम दिया। जेल में सावरकर के अंगरेजों को लिखे कई माफीनामे दर्ज किए गए।

सन 1921 में अंडमान से छूट कर लौटे सावरकर ने फिर कभी ब्रिटिश सरकार और उसकी नीतियों की मुखालफत नहीं की। इतिहास गवाह है कि उसके बाद सावरकर का लक्ष्य केवल हिंदुत्व का प्रचार रहा। सन 1857 के विद्रोह की सराहना करने वाले सावरकर ने 1942 के कांग्रेस द्वारा चलाए गए 'भारत छोड़ो आंदोलन' का विरोध किया। इतना ही नहीं, उन्होंने हिंदुओं को 'युद्ध कला' सीखने के लिए ब्रिटिश सशस्त्र बलों में शामिल होने के लिए भी कहा। सावरकर ने 1937 में बतौर हिंदू महासभा अध्यक्ष ''राजनीति का हिंदूकरण और हिंदुत्व में सशस्त्रीकरण'' नारा दिया।

आरएसएस के प्रभावशाली विचारक और तैंतीस साल तक उसके प्रमुख रहे माधव सदाशिव गोलवलकर ने भी ब्रिटिश सरकार के खिलाफ संघर्ष का विरोध किया। आजादी के एक दिन पहले, 14 अगस्त 1947 को, भगवा लहराने वाले आरएसएस के अंगरेजी प्रकाशन 'ऑर्गनाइजर' ने राष्ट्रीय ध्वज के रूप में 'तिरंगा' चुने जाने की खुलेआम निंदा की। इसके पीछे कारण बताया- शब्द 'तीन' का हिंदुओं के लिए अशुभ होना!

संघ और हिंदुत्व के अन्य सहयोगी दलों जैसे शिवसेना के संस्थापक बाल ठाकरे ने अक्सर खुलेआम हिटलर को आदर्श घोषित किया और 'लोकतंत्र' पर 'तानाशाही' को वरीयता दी। यह वाकई आश्चर्य की बात है कि आज भी हिटलर की आत्मकथा 'माइन कंफ' हमारे देश में सर्वाधिक पढ़ी जाती है। गोलवलकर ने अपनी किताब 'वी ऑर आवर नेशनहुड डिफाइंड' (1938) में नाजी द्वारा यहूदियों के विध्वंस को सही माना और लिखा कि ''शुद्धिकरण'' का यह तरीका हिंदुओं के लिए भी फायदेमंद होगा।

यह मसला व्यक्तिगत राय और दलीय विचारधारा तक सीमित कर दिया जाता है, पर जब पाठ्यक्रम की शक्ल में आता है तब उतना हल्का नहीं रह जाता। गुजरात के पाठ्यक्रमों में झांकें तो पता चलता है कि वहां गांधी से हिटलर ज्यादा महान था। इन किताबों में फासीवाद और नाजीवाद को सही माना गया। भयावह स्थिति यह थी कि कक्षा आठ के विद्यार्थी को 'गांधी के असहयोग आंदोलन के नकारात्मक पहलू' पढ़ाया जा रहा था। कक्षा दस की सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक में 'हिटलर, द सुप्रीमो' और 'फासीवाद की आंतरिक उपलब्धियां' पाठ शामिल थे। ('टाइम्स ऑफ इंडिया', अमदाबाद संस्करण, 30 सितंबर, 2004 की खबर)

ये सांप्रदायिक ताकतें हमेशा से राष्ट्र की संकीर्ण परिभाषा चाहती रहीं। देश के संविधान के प्रति भी हिंदूवादी नजरिया खोखले पिछड़ेपन का ही रहा। इस संदर्भ में यह जानना बेहद अहम है कि 1950 में आरएसएस ने भारतीय संविधान का विरोध करते हुए 'मनुस्मृति' का समर्थन किया। यानी इस सोच को ठीक समझा कि ''स्त्री, शूद्र या नास्तिक की हत्या पाप नहीं है।'' (मनु IX, 17 और VI 47, 147)

गांधी पर मुसलमान हितैषी होने का आरोप तो बाद की बात है। उन्हें अपना मल साफ कर मनु के कानून को तोड़ने के आरोप में पहले ही बहिष्कृत कर दिया गया था। गांधी की हत्या के बाद गोलवलकर और अन्य आरएसएस कार्यकर्ताओं को जेल भेजा गया। रामचंद्र गुहा लिखते हैं, ''6 दिसंबर, 1947 को (हत्या से दो महीने पहले) गोलवलकर ने दिल्ली के करीब गोवर्धन शहर के पास, आरएसएस कार्यकर्ताओं की एक बैठक बुलाई। पुलिस की रिपोर्ट के अनुसार इस बैठक में यह चर्चा हुई कि किस तरह कांग्रेस के प्रमुख व्यक्तियों की हत्या की जाए ताकि जनता के मन में खौफ पैदा किया जाए और उन्हें अपने शिकंजे में लिया जाए।''

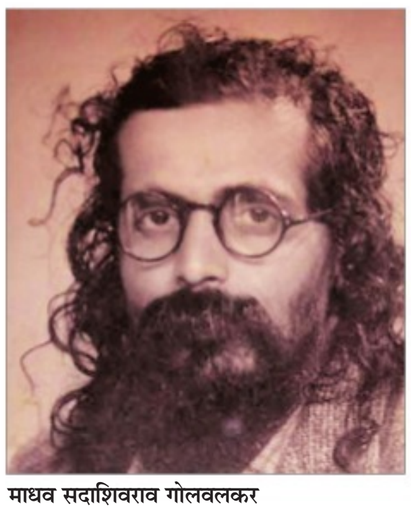

माधव सदाशिवराव गोलवलकर

जिन सरदार वल्लभभाई पटेल की संसार की सबसे बड़ी मूर्ति बनाने का वादा नरेंद्र मोदी ने किया है, उनका आरएसएस के बारे में कोई बहुत अच्छा मत नहीं था। गांधी की हत्या के मामले पर पटेल ने कहा था कि, ''सभी आरएसएस नेताओं के भाषण सांप्रदायिकता के जहर से भरे थे। इस जहर की अंतिम परिणति के रूप में, एक माहौल बनाया गया था, जिसमें इस तरह की एक भीषण त्रासदी संभव हो सकी... आरएसएस के लोगों ने खुशी व्यक्त की और गांधीजी की मृत्यु के बाद मिठाइयां बांटीं।'' (एमएस गोलवलकर और एसपी मुखर्जी को सरदार पटेल द्वारा लिखे पत्रों के अंश।)

आरएसएस के पास लिखित संविधान और आधिकारिक सदस्यों की कोई सूची न होने के कारण गांधी की हत्या में आरएसएस की संलिप्तता पूर्ण रूप से साबित नहीं हो सकी, इसलिए जून, 1949 में आरएसएस से प्रतिबंध हटा लिया गया।

जिन्हें लगता है कि आज आरएसएस में पुनर्विचार और परिवर्तन हुआ है, उन्हें अवश्य पढ़ना चाहिए नरेंद्र मोदी की 2010 में प्रकाशित गोलवलकर की प्रशंसाः ''श्री गुरुजी- एक स्वयंसेवक''।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीन के राष्ट्रपति शी जिनफिंग अमदाबाद के गांधी आश्रम में चरखे के साथ।

सन 1927 में दलित शिक्षा की वर्जना को तोड़ने वाले डॉ भीमराव आंबेडकर ने अपने बहु-जाति अनुयायियों के साथ मिल कर 'मनुस्मृति' को जलाया। दहन कार्य सहस्रबुद्धे नाम के आंबेडकरवादी ब्राह्मण ने संपन्न किया, हालांकि इसके बाद भी हिंदुत्व के निर्माताओं ने 'मनुस्मृति' को पवित्र ही माना। जहां सावरकर ने मनुस्मृति को ''वेदों के बाद सबसे अधिक पूजनीय ग्रंथ'' और ''राष्ट्र की आध्यात्मिकता और दिव्य उन्नति का आधार'' बताया, वहीं गोलवलकर ने मनु को ''पहला और मानवजाति का महान बुद्धिमान कानूनदाता'' माना।

> 'धर्म' और 'राष्ट्रवाद' के नाम पर सांप्रदायिक संगठन बने और मजबूत हुए, पर इनका लक्ष्य भारत को आजाद कराना नहीं था। तथ्य यह सच सामने रखते हैं कि ब्रिटिश शासन के खिलाफ किसी सांप्रदायिक संगठन ने कोई लड़ाई नहीं लड़ी और सावरकर के अलावा, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिंदू महासभा का कोई भी सदस्य जेल नहीं गया।

गांधी के हस्तक्षेप की बदौलत डॉ आंबेडकर भारतीय संविधान को तैयार किया और भारत के पहले कानून मंत्री बन सके। समान नागरिक संहिता की ओर बढ़ते हुए आंबेडकर ने पहले कदम के रूप में हिंदू कोड बिल तैयार किया, जिसमें पहली बार हिंदू महिलाओं को हिंदू पुरुषों के समान दर्जा मिला। हिंदुत्व के रखवालों ने इसका पुरजोर विरोध किया। नेहरू के आश्वासन के बावजूद यह बिल पारित नहीं हो सका और क्षोभ और घृणा के कारण 1951 में आंबेडकर ने इस्तीफा दे दिया। जब हिंदू कोड बिल बाद में पारित हुआ तब समान नागरिक संहिता के लिए लड़ने वाले आंबेडकर मौजूद नहीं थे।

जातिवाद बढ़ता गया और साथ ही हिंदुओं को दिलाया गांधी का वह आश्वासन भी टूटता गया, जिसमें उन्होंने ऊंची जातियों के हृदय-परिवर्तन होने का भरोसा जताया था। 1956 में आंबेडकर ने एक लाख दलित अनुयायियों के साथ हिंदू धर्म को त्याग कर बौद्ध धर्म अपना लिया। यह इतिहास का सबसे बड़ा धर्मांतरण था।

धर्म परिवर्तन से दलित आत्मसम्मान में इजाफा हुआ। इसके अलावा मुश्किलों से हासिल आरक्षण नीति ने कुछ हद तक आर्थिक सुधार भी किए, पर दलितों पर हमले नहीं रुके। यहां तक कि रोजाना औसतन तीन दलित महिलाओं का बलात्कार और दो दलितों की हत्या होती है।

ईसाइयों पर हमला

राज्य उपेक्षित आदिवासी और दलित क्षेत्रों में स्कूल खोलने वाले और आर्थिक और चिकित्सा लाभ उपलब्ध कराने वाले ईसाइयों को हिंदुत्व ने निशाना बनाया। जनवरी 1999 में कुष्ठ रोगियों के लिए काम कर रहे आस्ट्रेलियाई ईसाई मिशनरी ग्राहम स्टेंस को उसके दो बेटों फिलिप (10) और टिमोथी (6) को भीड़ की अगुआई कर जला कर मारने की ओड़िशा की घटना इसी की गवाही देती है। इसके बजरंग दल के कार्यकर्ता दारा सिंह को मौत की सजा सुनाई गई थी।

भाजपा शासित केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त वधवा आयोग ने स्टेंस की हत्या में बजरंग दल की भूमिका को नकारते हुए उसे शांतिपूर्ण और कानूनी संगठन करार दिया। गिरजाघर में आग लगा दिए जाने के बाद बच कर निकल रहे ईसाई धर्म गुरु अरुल दास की तीर मार कर हत्या करने और मुसलिम व्यापारी शेख रहमान की हत्या के आरोपी दारा सिंह को मौत की सजा सुनाई गई। हालांकि, अपील पर उस सजा को रोक दिया गया। सजा को बदलने के दौरान सुप्रीम कोर्ट का कहना था कि ''उसका इरादा उसे उसकी धार्मिक गतिविधियों का सबक सिखाने का था, मारने का नहीं।'' हिंदुत्व की वेबसाइटों पर आज भी दारा सिंह को 'हिंदू धर्म रक्षक' की तरह देखा जा सकता है।

1990 के बाद ईसाइयों पर हमले, हत्या और बलात्कार की घटनाओं में वृद्धि हुई है। 2008 में ओड़िशा के कंधमाल की घटना इसका बड़ा उदाहरण है। जिन राज्यों में भाजपा या भाजपा गठबंधन की सरकारें हैं, वहां स्थिति और भी बदतर है। ऐसे मामलों में धर्मांतरण के सारे आरोप झूठे होते हैं। सच्चाई यह है कि आजादी से अभी तक भारत में ईसाइयों की संख्या घट कर 2.6 फीसद से 2.3 फीसद हो गई है।

मुसलमानों पर हमला

आजादी के बाद मुसलमानों की जनसंख्या में मामूली बढ़ोतरी हुई है, पर इसकी वजह हिंदुत्व के आरोपों से अलग है। वजह धर्मांतरण या 'लव जिहाद' नहीं है और न ही इसका संबंध मुसलमान पुरुषों के चार पत्नियां रखने की अनुमति से है। इसकी जड़ इस सच्चाई में है कि प्रत्येक धरातल पर मुसलमान गरीब है।

सच्चर कमेटी की रिपोर्ट से यह साफ है कि भारत में मुसलमान शिक्षित कम और गरीब अधिक हैं। इसके अलावा केंद्रीय और राज्य की विधायिकाओं और नौकरशाही में उनकी मौजूदगी बहुत कम है। सेना और अर्द्धसेना में उनकी मौजूदगी की बात न ही की जाए तो बेहतर है। केंद्र और अधिकतर राज्यों में भाजपा की मजबूत पैठ ने सरकार में मुसलमानों की मौजूदगी को और भी अधिक दुष्कर किया है।

हिंदुत्व ने हमेशा मुसलमानों की बुरी तस्वीर उकेरी है, जहां उनकी क्रूरता, बलात्कार और मंदिरों को नुकसान पहुंचाने से जुड़े मिथकों को बचपन से नियमित तौर पर दिमाग में बैठाया जाता रहा है। यह क्रोध और घृणा इस कदर हावी होती है कि मुसलमान द्वारा किसी हिंदू महिला के अपहरण या बलात्कार की अफवाह के सामने आते ही दंगे की शुरुआत हो जाती है। कोई उस अफवाह की पुष्टि की प्रतीक्षा भी नहीं करता। दंगे फैलाना और जनसंहार करना किस हद तक आसान है!

नाथूराम गोडसे

आतंकवाद को सीधे इस्लाम से जोड़ देने के तथ्य और मिथक को अंतरराष्ट्रीय समर्थन भी है। यह एक लोकप्रिय धारणा बनी है कि 'सभी मुसलमान आतंकवादी नहीं हैं, लेकिन सभी आतंकवादी मुसलमान हैं'। जहां अमेरिकी और इजरायली इस्लाम विरोधी मानसिकता हिंदुत्व मानसिकता से जुड़ती है, वहां जवाबी आतंकवाद की परिभाषा शुरू होती है।

'मुसलिम आतंकवाद' के भेष में 'भगवा आतंकवाद'

मालेगांव विस्फोट (2006, 2008), समझौता एक्सप्रेस विस्फोट, हैदराबाद मक्का मस्जिद विस्फोट 'भगवा आतंकवाद' के बड़े उदाहरण हैं। मालेगांव विस्फोट मामले में लगातार सात सालों तक पाकिस्तान पर आरोप लगाने और इस विस्फोट के आरोप में मुसलिम संदिग्धों को गिरफ्तार करने और यातना देने के बाद मई 2013 में भारत की प्रमुख आतंकवाद विरोधी एजेंसी, नेशनल इन्वेस्टिगेशन एजेंसी (एनआइए) ने चार कट्टरपंथी हिंदुओं के खिलाफ आरोप दायर किए। ये चारों आरोपी आरएसएस के पूर्व कार्यकर्ता थे।

आरएसएस कार्यकर्ता स्वामी असीमानंद ने हैदराबाद मक्का मस्जिद में हुए आतंकवादी हमले में अपनी भागीदारी कबूल की और साथ ही यह भी माना कि मालेगांव के मस्जिद बम धमाकों (2006 और 2008) और समझौता एक्सप्रेस के हमले कट्टरपंथी हिंदुओं द्वारा अंजाम दिए गए और उसे इसकी जानकारी थी। वहीं समझौता एक्सप्रेस धमाके के संदिग्ध आरएसएस कार्यकर्ता सुनील जोशी की हत्या के आरोप में एनआइए ने साध्वी प्रज्ञा सिंह ठाकुर समेत तीन लोगों पर मुकदमा दायर किया। एटीएस द्वारा की गई आगे की गिरफ्तारियों ने 'राष्ट्रीय जागरण मंच' और 'अभिनव भारत', इन दो हिंदू संगठनों को सक्रिय पाया।

मौजूदा जल संसाधन मंत्री उमा भारती और शिवसेना ने सार्वजनिक तौर पर अभियुक्तों का बचाव किया। लालकृष्ण आडवाणी ने एटीएस की कार्रवाई को 'राजनीति-प्रेरित' और 'अव्यावसायिक' भी कहा। यही नहीं, तत्कालीन एटीएस की टीम में बदलाव की मांग भी की। एटीएस प्रमुख स्वर्गीय हेमंत करकरे संघ परिवार के निशाने पर थे। 2008 के मुंबई आतंकवादी हमले में करकरे की मौत के बाद उनकी पत्नी कविता करकरे ने गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी से एक करोड़ रुपए लेने से इनकार कर दिया।

वजह साफ थी। मोदी के साथ पूरा संघ परिवार और शिवसेना सभी भगवाधारियों के फैलाए आतंक की जांच कर रहे हेमंत करकरे के कट्टर विरोधी थे।

आरएसएस का पुनरुत्थान

गांधी की हत्या के दो दशकों बाद तक आरएसएस मुख्यधारा की घृणा का पात्र रहा। पर परदे के पीछे लगातार अपनी शाखाओं को संचालित करता रहा, जिसमें छह से अठारह साल के बच्चों को भर्ती कर उन्हें प्रशिक्षण देने का काम होता रहा। संघ का यह प्रशिक्षण शारीरिक और मानसिक दोनों तरह का होता था। राष्ट्रवाद के नाम पर अल्पसंख्यकों के प्रति नफरत को गहरे घोला जाता था। संघ की शाखा में प्रशिक्षित होने वालों में एक आठ वर्षीय बच्चे का नाम था नरेंद्र मोदी। भाजपा अध्यक्ष अमित शाह सहित पांच मुख्यमंत्री और तेईस कैबिनेट मंत्रियों में से सत्रह या तो आरएसएस के सदस्य हैं या रह चुके हैं। मार्च 2014 में, 'गार्डियन' की रिपोर्ट के अनुसार, पूरे देश में आरएसएस की पचास हजार से अधिक शाखाएं हैं और चार करोड़ से ज्यादा सदस्य हैं। पूरे भारत में आरएसएस का नेटवर्क कम से कम अठारह हजार स्कूलों में भी फैला है।

प्रतिबंधित आरएसएस ने 1948 में नए और वैध संगठनों की बुनियाद रखनी शुरू की, जो पूरी तरह से आरएसएस के नियंत्रण में थी। इनमें 1948 में बनाया गया छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) पहला था। इसी प्रकार क्रमशः जनसंघ (1951), विश्व हिंदू परिषद (1964), वनवासी कल्याण आश्रम (1952) और बजरंग दल (1984) अस्तित्व में आए। इन सभी संगठनों के निश्चित उद्देश्य थे। मसलन, चुनाव लड़ना, दुनिया में सांप्रदायिक शिक्षा फैलाना, आदिवासियों को प्रेरित करना, बाबरी मस्जिद गिरा कर राम मंदिर बनाना आदि। इसके अलावा और सारे अनौपचारिक कट्टर हिंदुत्ववादी संगठन भी बने।

कई दशकों की अलोकप्रियता के बाद आरएसएस का एक अप्रत्याशित जरिए से पुनर्वास हुआ। 1960 के दशक में अकाल के दौरान गांधीवादी और समाजवादी जयप्रकाश नारायण (जेपी) ने पाया कि आरएसएस के युवा स्वयंसेवक बिहार में राहत का काम कर रहे हैं। जेपी को आरएसएस की संकीर्ण राजनीतिक समझ के बाद भी उसमें राजनीतिक संभावनाएं दिखाई दीं। जब इंदिरा गांधी ने आरएसएस को फासीवादी कहा, तो 1974 के छात्र आंदोलन के नेता जेपी ने खुलेआम यह घोषित किया कि, ''यदि आरएसएस फासीवादी है तो मैं भी फासीवादी हूं।'' इसके बाद आरएसएस ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। इसका प्रमाण 1977 में जनता पार्टी की गठबंधन सरकार से कांग्रेस को मिली हार थी। पहली बार आरएसएस में पले लालकृष्ण आडवाणी और अटल बिहारी वाजपेयी कैबिनेट मंत्री बने। आरएसएस के आदेश मानने के मुद्दे पर 1980 में यह सरकार गिर गई और तब जनसंघ बदल कर एक नई पार्टी- भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)- के रूप में सामने आई।

वैश्विक संदर्भ

आजादी से 1970 के दशक तक भारत शक्तिशाली अमेरिका और सोवियत रूस से समदूरस्थ रहा। नेहरू की आर्थिक नीति भी सरकारी और निजी क्षेत्र के बीच की रही। 1971 के बांग्लादेश युद्ध में जब अमेरिका ने पाकिस्तान की तरफदारी की, भारत सोवियत रूस के करीब आया।

डॉ भीमराव आंबेडकर

1947 से पड़ोसी देश अफगानिस्तान की सोवियत रूस से दोस्ती थी। रूस उसे आर्थिक, सैन्य और राजनीतिक मदद देता था। बहुत से अफगानी, खासकर स्त्रियां, इस धर्मनिरपेक्ष दौर को प्यार से याद करते हैं। 1979 में अमेरिका ने दुनिया के बिन लादेन जैसे जिहादियों को पाकिस्तान में इकट्ठा कर, कम्युनिस्ट अफगानिस्तान पर हमला बोला।

नतीजा भारत में भी सांप्रदायिक ताकतें बढ़ीं। अमेरिका के लिए सोवियत समर्थक भारत को अस्थिर करना आकर्षक लगा होगा। तो क्या यह महज इत्तेफाक था कि लगभग एक ही समय पर कश्मीर में इस्लामिक आतंकवाद ने जोर पकड़ा और पंजाब ने सिख अलगाववादी आंदोलन सहन किया? लगातार हिंसा के माहौल के बाद संसद में भाजपा दो सीटों से बढ़ कर अट्ठासी तक पहुंच गई। यह उदारीकरण की शुरुआत थी और हिंदुत्व भी साथ ही अपना कद बढ़ा रहा था।

2005 में मोदी का न्यूयॉर्क के मैडिसन स्क्वायर गार्डन में एक रैली को संबोधित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र जाना, अमेरिकी वीजा न मिल पाने की वजह से रद्द हुआ। वीजा न मिलने का कारण था गुजरात में हुआ जनसंहार। इसके बाद अमेरिका में वीजा दिलवाने के लिए बारीकी से लॉबिंग की गई, जिसमें चाय पार्टी के समर्पित कार्यकर्ता शामिल थे। मोदी के अमेरिका न जा पाने पर श्रीश्री रवि शंकर ने उनकी जगह ली थी। गुजरात जनसंहार की बात को टालते हुए श्रीश्री रविशंकर ने कहा, ''मैं व्यक्तिगत टिप्पणी नहीं करता क्योंकि व्यक्ति समष्टि का महज एक अंग है।'' इसके बाद श्रीश्री रविशंकर ने मोदी के शासनकाल में गुजरात में हो रहे अभूतपूर्व विकास का दावा किया। एक साल में बने चालीस हजार से अधिक बांधों के बनने का दावा करते हुए रविशंकर ने कहा कि, ''गुजरात में जल स्तर बहुत ऊपर आ गया है। लोग बहुत खुश हैं।'' शायद उन्हें किसी ने यह नहीं याद दिलाया कि बांध से पानी निर्माण नहीं होता, मगर इसके जरिए जो लोग उसकी कीमत नहीं चुका पाते, उनसे पानी छीन कर कीमत चुकाने वालों को दिया जाता है।

बाकी पेज तीन पर →